मई-२०११ का प्रथम पाक्षिक निवेदन-

श्रद्धा और विश्वास

पंक्ति संख्या

साधन मार्ग पर चलने में दो भाव अत्यन्त आवश्यक हैं- श्रद्धा और विश्वास। **श्रद्धा** मन का वह भाव है जिसके आधीन अपने विचारों और कर्मों को करने से ही मनुष्य अपना कल्याण निश्चित होना सम्भव समझता है। **विश्वास** मन का वह भाव है जिसके आधार पर मनुष्य यह दृढ़ विचार रखता है कि अमुक व्यक्ति अथवा ग्रन्थ आदि द्वारा प्रतिपादित बात ही संशयरहित सत्य है। उदाहरणार्थ - किसी विद्यालय की एक कक्षा में कई विद्यार्थी होते हैं। इनमें से कुछ छात्र अपने मन को एकाग्र कर सर्वप्रथम अपने पाठ्यक्रम की जानकारी प्राप्त करते हैं। उस पर अपने मन को केन्द्रित कर निर्धारित पुस्तकें प्राप्त करते हैं। ऐसा करने में वे विद्यालय के नियमों और अध्यापकों के प्रति पूर्ण 'श्रद्धा' रखते हैं तथा यह 'विश्वास' रखते हैं कि ऐसा करने में वे उस कक्षा की योग्यता प्राप्त करने में निश्चित रूप से सफल होंगे। ऐसी श्रद्धा और विश्वास के बल पर जीवन में उनको निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होती है। इसके विपरीत कुछ छात्रों में न श्रद्धा होती है और न विश्वास। वे दूसरों छात्रों की देखा-देखी किसी तरह विद्यालय में अपना समय काटते रहते हैं। कभी-कभी तो वे अवांछनीय व्यक्तियों और पदार्थों का सेवन कर परिवार और समाज के लिये अभिशाप ही बन जाते हैं।

२. श्रद्धा और विश्वास के भाव एक दूसरे पर अवलम्बित रहते हैं। श्रद्धा से विश्वास और विश्वास से श्रद्धा पुष्ट होते हैं। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीपार्वतीजी को श्रद्धा का तथा शंकर भगवान् को विश्वास का साकार रूप बताया है(रामचरितमानस, बालकाण्ड, मंगलाचरण)।

३. प्रकृति के तीन गुण अर्थात् सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की तरह, प्रत्येक मनुष्य की जन्मजात श्रद्धा भी तीन प्रकार की होती है- सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक(गीता १७/२)। इसीलिए यह श्रद्धा ''स्वभावजा'' कही गई है। किन्तु वर्तमान जन्म में मनुष्य मात्र को यह अधिकार है कि वह उचित उपाय करके अपनी स्वभावजा श्रद्धा को जैसा चाहे मोड़ दे। वर्तमान मनुष्य जन्म में प्रयत्न करने से स्वभावजा श्रद्धा पूरी तरह बदल सकती है(गीता- जीवन विज्ञान १४/१० की व्याख्या)।

४. मनुष्य के जीवन की गति तथा मरणोत्तर गति इस पर निर्भर करती है कि जीवन में तथा मृत्यु के समय उसके मन में किस गुण की प्रधानता है। सत्वगुण की प्रधानता से उसकी गति ज्ञान तथा सुख की ओर होती है। रजोगुण की प्रधानता से दुःख की ओर गति होती है। तमोगुण की प्रधानता से अज्ञान (अंधकार, विषाद, शोक, इत्यादि) की ओर गति होती है(गीता १४/१६)। इन में से किसी भी समय होने वाली गति को समझकर मनुष्य यह जान सकता है कि इस समय उसके मन में कौन सा गुण प्रधानता से है।

५. सत्वगुण की प्रधानता रहने से तथा भगवान् में दृढ़ भक्तिभाव होने से मनुष्य तीनों गुणों को पार कर भगवत् स्वरूप प्राप्त कर लेता है (गीता १४/२६)।

६. सारांश यह है कि भगवान् की वाणी अर्थात् गीता, भागवत्, रामचरितमानस आदि सद्ग्रन्थों पर निष्ठा, उन पर रचित संत- महात्मा आदि महापुरुषों की व्याख्याओं पर दृढ़ विश्वास करना, **रजोगुणी एवं तमोगुणी प्रकृति के मनुष्यों के प्रति सद्भाव रखते हुए किन्तु उनके संग या साहित्य से सुख लेने की आशा का त्याग करना,** भक्तों के चरित्र पढ़ना, भगवान् की लीलाओं पर निरन्तर विचार करना ही मनुष्य के लिए श्रेयस्कर है। इससे पूर्व जन्म की अर्जित श्रद्धा बदल कर सात्विक हो जाती है और साथ ही भगवान् की भक्ति से भगवत्प्राप्ति हो जाती है। भगवन्नाम तथा मंत्रों के नित्य स्मरण एवं नियम पूर्वक जप से यह कार्य अत्यन्त सुगमतापूर्वक सिद्ध हो जाता है।